वैश्विक संकट की बदलती रूपरेखाएं -भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव *

आनन्द सिन्हा

डॉ. देवी सिंह, निदेशक, आईआईएम, लखनऊ तथा मेंटर निदेशक आइआईएम, काशीपुर, प्रो. मनोज आनंद एवं अन्य संकाय सदस्यगण, मेरे बैंकर साथी और आइआईएम, काशीपुर के युवा और उत्साही विद्यार्थी। मेरी ओर से आप सभी को प्यार भरा नमस्कार। आप जैसे युवा और प्रतिभाशाली छात्रों के सामने बोलना मेरे लिए सौभाग्य का विषय है। मैं इनमें सुनने की इच्छा, प्रश्न करने का साहस और उन चुनौतियों के प्रति उत्साह देख रहा हूँ जो भविष्य ने इनके लिए संभाल कर रखी हैं। असल में तो जो चुनौतियाँ आज हमारे सामने हैं, मैं इनमें उनका जवाब देख रहा हूँ। छात्रों के साथ विचारों का आदान-प्रदान करना सदा ही ऊर्जा देने वाला तथा शिक्षा का स्रोत होता है और यही कारण था कि मेरे कार्यस्थल मुंबई से यह जगह इतनी दूर होने के बावजूद मैंने इनसे चर्चा करने का जो अवसर मिला, उसे स्वीकार करने में मैंने दुबारा नहीं सोचा।

2. आईआईएम काशीपुर सबसे युवा आईआईएम है। ग्रुप में युवा होने का भी बड़ा लाभ होता है। आपके पास अनुभव का भंडार सामने होता है जिसमें से आप चाहे जो चुन सकते हैं और सीख सकते हैं। इसी के साथ ग्रुप में युवा होने की चुनौतियाँ कई बार डराने वाली भी होती हैं। आपसे उन ऊँचाइयों तक पहुँचने की अपेक्षा की जाती है जहाँ तक आपके वरिष्ठ पहुँचे; बल्कि उन्हें भी पार करने की अपेक्षा की जाती है। आज छात्रों के उत्साह को देखते हुए मुझे यकीन है कि आईआईएम काशीपुर देश के आईआईएम में एक प्रमुख संस्थान बन जाएगा।

3. आज के अपने भाषण के लिए जो विषय मैंने चुना है वह काफी घिसा-पिटा लगता है। संकट के बारे में पहले ही कितना कुछ कहा जा चुका है, बहसें हो चुकी हैं, विश्लेषण हो चुके हैं, और चीर-फाड़ भी हुई है। 2007 में आए इस संकट ने देखते-देखते लोगों की अवचेतना को इतना घेर लिया है कि इसके संदर्भ के बिना कोई वित्तीय भाषण पूरा नहीं होता और न ही कोई वित्त संबंधी पुस्तक इस पर एक अध्याय लिखे बिना पूरी मानी जाती है। अगर हम संकट के विषय पर प्रकाशित पुस्तकों की संख्या पर गौर करें तो हमें यह देखकर कोई हैरानी नहीं होनी चाहिए कि प्रकाशन उद्योग ऐसी स्थिति में भी एक ऐसा उद्योग रहा जो न केवल ज़िंदा रहा बल्कि फला-फूला भी।

4. तो फिर मैं ऐसे विषय पर क्यों बोल रहा हूँ जिस पर कि पहले ही इतनी चर्चा हो चुकी है। इसके दो कारण हैं पहला, इस संकट से हमें न केवल विशाल जानकारी मिल रही है बल्कि ऐसी सीखें भी मिलीं जो हमारे लिए आने वाले समय में भी उपयोगी होंगी। दूसरे, संकट वह नहीं रहता जो था, जब यह शुरू हुआ था। यह संकट जो कि एक स्थानिक सब-प्राइम संकट के रूप में शुरू हुआ था अब वित्तीय संकट के रूप में रूपांतरित हो गया है और पूर्ण विकसति वैश्विक आर्थिक संकट बन गया है और अब इसने "सरकारी (सोवरेन) - कर्ज़-संकट" का रूप ले लिया है। यद्यपि इसका वर्तमान फैलाव, यूरो ज़ोन में अवस्थित है, परंतु इसका असर पूरे विश्व में महसूस किया जा रहा है। इसी परिदृश्य में आज मैंने अपना अभिभाषण 'वैश्विक संकट की बदलती रूपरेखाएँ भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव' विषय पर देने का निर्णय किया है।

I तूफान से पहले की शांति : ग्रेट मॉडरेशन की अवधि

5. वैश्विक संकट से पहले की अवधि ग्रेट मॉडरेशन की अवधि थी जिसमें बृहत् आर्थिक उतार चढ़ाव में कमी आई थी (उत्पादन तथा स्फीति, दोनों दृष्टि से)। इस अवधि में पूरे विश्व में जीडीपी वृद्धि बहुत तेज़ हुई। स्फीति कम अथवा स्थिर रही और ब्याज दरें बहुत कम रही जिससे नीति निर्माताओं और अर्थशास्त्रियों को यह विश्वास होने लगा कि 'होली ग्रेल' की उनकी खोज पूरी हो गई है और मज़बूत वृद्धि तथा कम स्फीति का जादुई फार्मूला आखिर खोज लिया गया है। ग्रेट मॉडरेशन के ये कारण बताए गए[1] ; (i) संरचनात्मक बदलाव जिन्होंने कि बृहत् आर्थिक लोचनीयता तथा स्थिरता में वृद्धि

* 11 फरवरी 2012 को आईआईएम काशीपुर द्वारा काशीपुर में आयोजित वित्त शिखर सम्मेलन में भारतीय रिज़र्व बैंक के उप-गवर्नर श्री आनंद सिन्हा द्वारा दिया गया अभिभाषण। श्री जनक राज, श्री सुदर्शन साहू, श्रीमती पल्लवी चव्हाण तथा श्री जय कुमार यारासी द्वारा दिए गए योगदान के लिए उनका आभार।

[1] बनकि बैन (2004), फरवरी में, ईस्टर्न इकोनोमिक एसोसिएशन, वाशिंगटन डीसी की बैठकों में दिया गया भाषण *'द ग्रेट मॉडरेशन'*।

की होगी, जैसे कि कम्प्यूटेशन तथा संचार में हुई प्रगति ने कारोबार इन्वेंट्रियों के प्रबंधन को सुधारा, वित्तीय बाजारों में अधिक गहराई तथा अत्याधुनिकता, कई उद्योगों में अविनियमन, निर्माण से सेवाओं में तथा वृद्धिशील खुलेपन से व्यापार और अंतरराष्ट्रीय पूँजी प्रवाहों में शिफ्ट, इत्यादि। (ii) बृहत् आर्थिक नीतियों के कार्यनिष्पादन में सुधार अथवा (iii) अच्छी किस्मत। ग्रेट मॉडरेशन को बनाए रखने में अच्छी किस्मत पर व्यापक चर्चा और बहस हुई और जैसा कि हर कोई चाहता था, जब चीज़ें अच्छी तरह चल रही थी तो उसकी भूमिका को कम करके क्यों आँका जाए।

6. सारा क्रेडिट अच्छी किस्मत को देने में समस्या यह है कि यह आपको झटकों के लिए तैयार नहीं होने देती और भेद्य बना देती है। क्योंकि सिर्फ किस्मत के भरोसे रहने पर असल में आप परिस्थितियों के कैदी बन जाते हैं। दूसरी ओर यदि आपने किस्मत को नहीं माना तो आप खुद को 'ओवर रेट' कर देते हैं और संकट के समय आप तैयार नहीं हो पाते।

7. कारण कुछ भी रहा हो, अच्छा समय ज्यादा नहीं टिका और जब संकट उभरा तो 2007 के अंत में ग्रेट मॉडरेशन का वक्त भी पूरा हो गया । वित्तीय विश्व पर संकट का असर बहुत गहरा हुआ। विश्व की वृद्धि बैठ गई, बेरोजगारी बहुत बढ़ गई, काउंटर पार्टी चिंताओं तथा जोखिमों की वजह से अंतर्बैंक बाज़ार फ्रीज़ हो गए। बैंकिंग कारोबार ठप्प पड़ गया तथा गैर-निष्पादक ऋणों की संख्या बढ़ गई तथा कई बड़ी और प्रसिद्ध संस्थाएँ वित्तीय विश्व से गायब हो गईं। गैर-वित्तीय मोर्चों पर भी संकट का असर कुछ कम नहीं हुआ। असल में बौद्धिक विश्व पर संकट ने भारी असर डाला क्योंकि उन अवधारणाओं और

चार्ट 1 : वैश्विक असंतुलनों का निर्माण

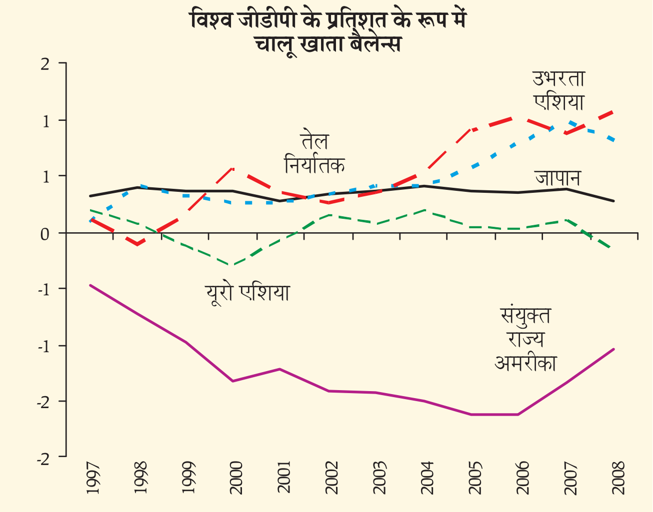

स्रोत : बृहत् आर्थिक नीति के लिए वैश्विक संकट के पाठ - आईएमएफ (फरवरी 2009)

सिद्धांतों की मज़ाक उड़ने लगी जो अब तक पवित्र माने जाते थे। विश्लेषकों, शोधकर्ताओं तथा नीति निर्माताओं ने संकट के कारणों की खोज में जान लड़ा दी और बहुत से सिद्धांत और स्पष्टीकरण सामने आए। अधिक सत्याभासी स्पष्टीकरण इस प्रकार थे - देशों के बीच उपभोग और निवेश पैटर्न के बीच विभिन्नताओं (एशिया में और तेल निर्यातक देशों में बचत की भरमार जबकि अमरीका में खर्च की भरमार) से वैश्विक संतुलन बिगड़ा जिससे सरप्लस देशों से, बड़ी मात्रा में बड़े पूंजी प्रवाह घाटे के देशों में आए जो कि अधिकांशतः उन्नत देश थे।

8. इन पूंजी प्रवाहों से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में चलनिधि में वृद्धि हुई है जिससे ब्याज दरें कम हो गई। अल्पावधि और दीर्घावधि, दोनों प्रकार की वास्तविक ब्याज दरें, काफी लम्बी अवधि तक, काफी कम रहीं। कम ब्याज दरों ने निवेशकों को अधिक कमाई की राह खोजने को मजबूर किया जिससे "परिसंपत्ति-स्फीति" के बीज डाले। निवेशकों को, ऊँची कमाई के उत्पाद, डिज़ाइन और ऑफर करने की कोशिश में "वित्तीय-इंजीनियरिंग" ने केन्द्रीय स्थिति हासिल कर ली।

9. इनके अतिरिक्त, विनियामक फ्रेमवर्क में आए अन्तरालों ने भी, संकट को ऊपर उठाने में अपनी भूमिका अदा की। संकट पैदा होने के, आमतौर पर प्रमुख कारण इस प्रकार माने जाते हैं : पूंजी की अपर्याप्त मात्रा और गुणवत्ता, अपर्याप्त चलनिधि सुरक्षा भंडार (बफर्स), अत्यधिक लीवरेज्ड वित्तीय संस्थाएं, कुछ जोखिमों का अपर्याप्त कवरेज, प्रणालीगत जोखिमों के समाधान हेतु कोई विनियामक ढांचा न होना, 'ग्रेट मॉडरेशन' के युग की पृष्ठभूमि में अधिक आमदनी की चाह में ऐसे अपारदर्शी उत्पादों की प्रचुरता जिन्हें लोगों ने बहुत कम समझा। सेक्युरिटाइज़ेशन प्रक्रिया में विकृत प्रोत्साहन वाली संरचना, "ओवर-द-काउंटर" बाज़ारों, खासकर 'क्रेडिट डिफॉल्ट स्वैप' में, पारदर्शिता का अभाव, अपर्याप्त विनियमन तथा पर्यवेक्षण तथा बिना/कम विनियमित "शैडो-बैंकिंग प्रणाली" का बड़ी तेज़ी से उभरना।

10. जहाँ ये सभी तत्व, संकट के लिए पूर्व पीठिका निर्मित कर रहे थे, वहीं संकट का सबसे प्रकट कारण था अमरीका के सबप्राइम बाज़ार में हो रही घटनाएं, जैसा कि रघुरामन राजन ने[2] पाया है, अमरीका में बढ़ती आय असमानता, जो गुणवत्तायुक्त शिक्षा तक असमान पहुंच के कारण उपजी है, उसके कारण आवास क्रेडिट के लिए अधिक राजनीतिक दबाव बढ़ा और परिणामस्वरूप वित्तीय क्षेत्र में अस्पष्ट ऋण वितरण हुआ। ख़राब कार्यान्वयन के कारण सर्वोत्तम आशय

[2] राजन, रघुरामन (2010), *'फॉल्ट लाइन्स - हाउ हिडन फ्रैक्चर्स स्टिल थ्रेटेन वर्ल्ड इकोनोमी'* : प्रिंस्टन युनिवर्सिटी प्रेस.

चार्ट 2 : एकदम कम ब्याज दरें काफी लम्बे समय के लिए

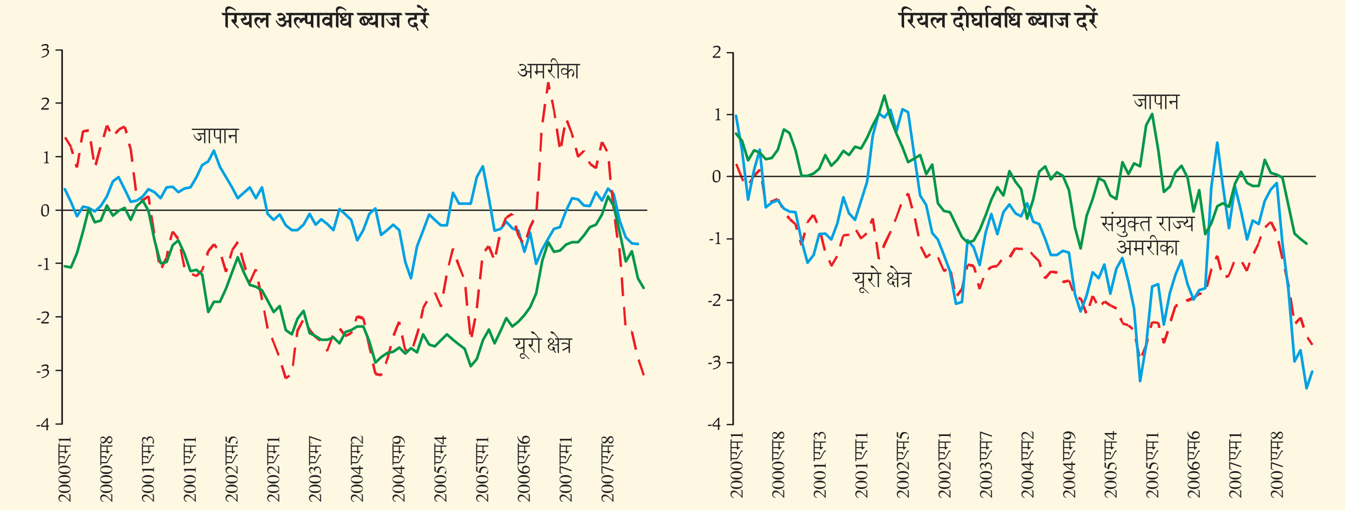

हेडलाइन स्फीति से संगत; 1990-2007 औसतों से विचलनों के रूप में मापित

स्रोत : बृहत् आर्थिक नीति के लिए वैश्विक संकट से शिक्षाएं - आइएमएफ (फरवरी 2009)

कैसे ख़राब परिणामों में बदल सकते हैं इसके जबरदस्त उदाहरण के रूप में वित्तीय समावेशन की इस परिकल्पित नीति ने बेघरों को अपने घर दिलवाने के चक्कर में सब-प्राइमरी मार्केट में अनियंत्रित वितरण करवाया और अंततः सारा ढांचा बैठ गया।

11. 2007 में शुरू हुआ यह संकट, केवल अमरीका में "अवस्थित मात्र सबप्राइम संकट" से शुरू हुआ। परंतु शीघ्र ही यह संकट विश्व के सारे बाजा़रों में फैल गया जिससे वैश्विक एकीकरण की मात्रा का पता चलता है। "सब-प्राइम- परिसंपत्तियों" के लिए, बैंकों ने जो ऋण दिए थे, और जो बड़ी तेज़ी से अशोध्य हो रहे थे उनके कारण यह सब-प्राइम संकट बैंकिंग संकट में बदल गया। काउंटर पार्टी चिंताएँ तेज़ हो गईं, जिससे वैश्विक अंतर्बैंक बाजा़रों पर तुषारापात हो गया। व्यापार-वित्त तथा उससे भी ज़्यादा विश्वास की छूत की विभिन्न सरणियों के जरिए, संकट, अन्य अधिकार क्षेत्रों में भी फैल गया। विदेशी निवेशकों ने उभरते बाज़ारों से अपने निवेश वापस लेने शुरु कर दिए और उन्हें भी चलनिधि के संकट में धकेल दिया। अक्तूबर 2008 तक, जब कि सब-प्राइम ऋणों के बोझ से लेहमैन ब्रदर्स बैठ गया था, संकट पूरी तरह, फैलाव और प्रभाव दोनों दृष्टियों से, सही मायनों में वैश्विक हो चुका था।

चार्ट 3 : सब-प्राइम ऋण वितरण में वृद्धि

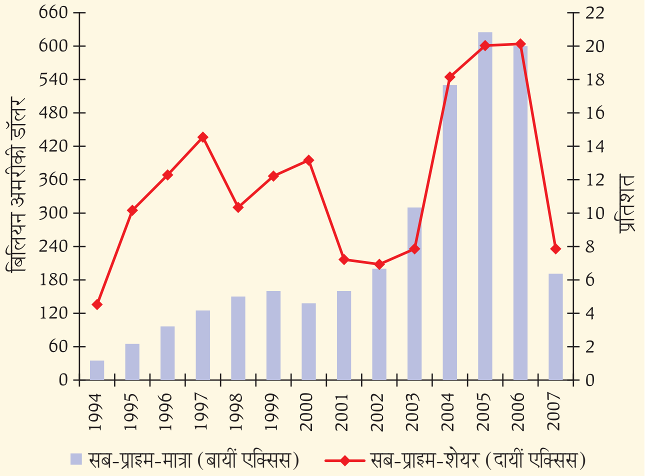

स्रोत: अमरीकी सब-प्राइम मॉर्टगेज संकट : उठाए गए मुद्दे और ली गई शिक्षाएं कमीशन ऑन ग्रोथ एण्ड डिवलपमेन्ट (2008)

12. उत्पादन की हानियों तथा बेराज़गारी बढ़ने की दृष्टि से, इस संकट का पूरे विश्व की अर्थव्यवस्था पर विकट प्रभाव पड़ा जिसने ऊँचे उतार-चढ़ावों, सख्त ऋण शर्तों, कम आस्ति मूल्यों तथा वृद्धिशील अवलिखितों के संदर्भ में, वैश्विक वित्तीय बाज़ारों के, सभी घटकों पर असर डाला। संकट के प्रभाव को कम करने के लिए नीति निर्माताओं, विनियामकों तथा प्रभुसत्ताओं को तत्काल कदम उठाने और असर को कम करने के लिए आगे आना पड़ा और कई कदम उठाने पड़े। परंपरागत तथा अपरंपरागत दोनों प्रकार के बहुत से उपाय किए गए जिनसे बुरी तरह से त्रस्त वैश्विक अर्थव्यवस्था को कुछ राहत मिली।

13. जैसे ही हमने सोचा कि संकट पीछे छूट गया है और अर्थ व्यवस्थाएँ पटरी पर वापस आने लगी हैं, वैसे ही विश्व में एक और संकट खड़ा हो गया। बीमारी से इलाज ज्यादा कष्टदायी होता है। इसका उदाहरण तब सामने आया जब 2007 के संकट को कम करने के लिए किए गए विभिन्न बजटीय उपायों तथा अन्य कई कारणों से, भारी गैर-टिकाऊ, सरकारी (सोवरेन) कर्ज़ इकट्ठे हो गए और

परिणामस्वरूप यूरो ज़ोन में सरकारी (सोवरेन) कर्ज़ का संकट खड़ा हो गया। जिन देशों में लोकरंजक नीतियों को बनाए रखने या फिर विफल होते बैंकों की गारंटी के लिए वैश्विक संकट के दौरान संस्थाओं को बचाने के चक्कर में भारी बजटीय घाटे हो गए थे उन्होंने अचानक खुद को दीवालिएपन के कगार पर पाया क्योंकि वे अपनी बाध्यताओं को पूरा करने में असमर्थ थे और 'सरकारी (सोवरेन)कर्ज़' नामक शब्द ने, अचानक, जोखिम रहित (कम से कम, कम जोखिम वाली) आस्ति की छवि के रूप में दिखना बंद कर दिया।

14. इस पृष्ठभूमि के परिप्रेक्ष्य में आज मैं अपनी बातचीत के केंद्रीय बिंदु 'वैश्विक संकट की बदलती परिधि रेखा भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव' पर आता हूँ। मैं वैश्विक तथा भारतीय अर्थव्यवस्थाओं पर 2007 के वैश्विक संकट तथा वर्तमान सरकारी (सोवरेन) कर्ज़ संकट, दोनों संकटों के असर को शामिल करना चाहूँगा जिसमें मैं सम्पदा क्षेत्र, वित्तीय बाज़ारों तथा बैंकिंग प्रणाली पर अधिक ध्यान केंद्रित करूँगा।

II. वैश्विक संकट

ए. वैश्विक अर्थव्यवस्था पर असर

15. सितम्बर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स के ढह जाने के बाद प्रमुख वित्तीय संस्थाओं द्वारा उठाई गई व्यापक हानियों तथा काउंटर पार्टी तुलन-पत्रों की स्थिति के संबंध में अत्यंत अनिश्चितता के कारण, विश्व के अंतर्बैंक वित्तीय बाज़ार ठप्प पड़ गए। इसका वित्तीय बाज़ारों के विभिन्न घटकों पर परिणामी प्रभाव पड़ा जिनमें अंतर्बैंक बाज़ार भी शामिल थे। निवेशकों द्वारा धड़ाधड़ बिक्री करने से आस्तियों के मूल्य और नीचे आ गए जिससे 'अफरातफरी-बिक्री' तथा आस्तियों की गिरती कीमतों का, एक दुष्चक्र शुरू हो गया। जोखिम से बचने और सुरक्षित क्षेत्रों की खोज के कारण निवेशकों को डिलिवरेज़िंग करनी पड़ी जिससे उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की ओर जाने वाले पूँजी प्रवाहों में जबरदस्त कटौती हो गई। वित्तीय बाज़ारों के विभिन्न घटकों में आए इस भूचाल के कारण प्रमुख अग्रिम अर्थव्यवथाओं की आर्थिक गतिविधि में भारी गिरावट आ गई। बेरोजगारी बढ़ गई तथा श्रम बाज़ार कमज़ोर हो गया। चूँकि अग्रिम अर्थव्यवस्थाओं तथा उभरती विकासशील अर्थव्यवस्थाओं (ईडीई) के बीच काफी अधिक व्यापार और वित्तीय एकीकरण हो रहा था इसलिए ई डी ई की गतिविधियों में भी तेज़ी से गिरावट आई।

16. अग्रिम अर्थव्यवस्थाओं में रियल जीडीपी वृद्धि 2009 में ऋणात्मक (-3.7 प्रतिशत) हो गई जबकि 2004-2007 में यह 2.9 प्रतिशत थी। 2010 में वृद्धि थोड़ी संभली परंतु 2011 में यह फिर लुढ़क गई (1.6 प्रतिशत)। 2008-11 में अग्रिम अर्थव्यवस्थाओं में वृद्धि औसतन मात्र 0.3 प्रतिशत रही और उत्पादन अभी भी क्षमता से बहुत कम है। आईएमएफ का अनुमान है कि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की वृद्धि 2012 में और भी घट कर 1.2 प्रतिशत रह जाएगी। दिसम्बर 2006 में अमरीका की बेरोज़गारी दर 4.4 प्रतिशत थी जो कि अक्तूबर 2009 में दुगने से भी बढ़ कर 10.0 प्रतिशत हो गई; अब इसमें धीरे-धीरे सुधार हो रहा है और अब यह 8.5 प्रतिशत तक आ गई है।

17. उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को पूँजी प्रवाह (निवल), 2007 के 705 बिलियन अमरीकी डॉलर से घट कर 2008 में 246 बिलियन अमरीकी डॉलर रह गया जबकि पोर्टफोलियो तथा बैंकिंग प्रवाह ऋणात्मक हो गए। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में लगे झटके तथा साथ ही पूँजी प्रवाहों में आई गिरावट को परिलक्षित करते हुए ईडीई की रियल जीडीपी वृद्धि 2004-2007 की 8 प्रतिशत से घट कर 2009 में 2.8 प्रतिशत हो गई। 2010 में यह तेज़ी से बहाल हुई और 7.3 प्रतिशत पर आ गई। कुल मिलाकर वैश्विक जीडीपी वृद्धि 2004-07 के दौरान की 5.0 प्रतिशत की मजबूत वृद्धि से एकदम सिकुड़ कर, 2009 में 0.6 प्रतिशत पर आ गिरी।

18. वैश्विक क्रेडिट और मनी-मार्केट्स में संकट की अवधि के दौरान जोखिम फैलाव आसमान में चढ़ गए। 17 सितम्बर 2008 को टीईडी स्प्रैड[3] 300 बीपीएस को पार कर गया और इसने 1987 के ब्लैक मंडे क्रैश के बाद स्थापित पिछले रिकॉर्ड को भी तोड़ दिया

चार्ट 4 : वैश्विक उत्पादन वृद्धि की प्रवृत्तियाँ

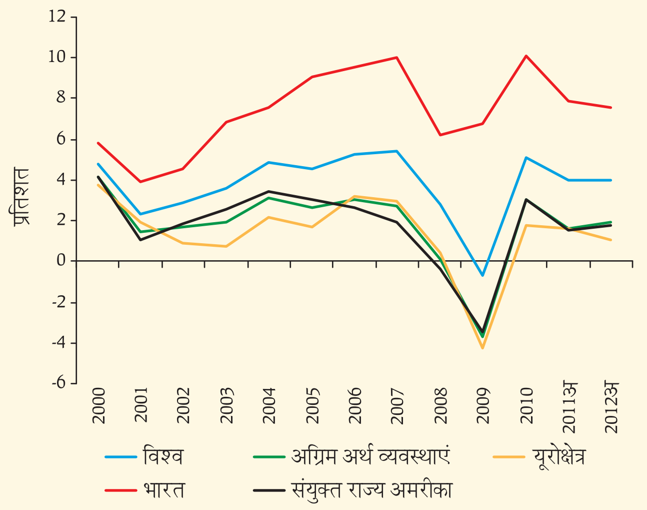

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वर्ल्ड इक्नोमिक आउटलुक डाटाबेस (सितंबर 2011)

[3] टीईडी स्प्रैड = 3 एम अमरीकी डॉलर लिबोर माइनस 3 एम यू एस - टी बिल. यील्ड यह साधारण अर्थव्यवस्था में पर्सीव्ड ऋण जोखिम का एक संकेतक है। टीईडी का दीर्घावधि औसत, 30 आधार बिन्दु रहा है और अधिकतम 50 बीपीएस रहा है।

और उसके बाद 10 अक्तूबर 2008 को यह 464 बीपीएस के अब तक के सबसे सर्वोच्च स्तर पर पहुँच गया। 3एम लिबोर - 3 एम ओआइएस स्प्रैड[4], लगभग 10 बीपीएस के सामान्य स्तर की तुलना में 10 अक्तूबर 2010 को 364 बीपीएस तक पहुंच गया। भारी जोखिम विमुखता, विश्व भर में, शेयर सूचकांकों में तेज़ गिरावट तथा तेज़ उतार-चढ़ाव के रूप में परिलक्षित हुई। मार्च 2009 में विश्व के शेयर बाज़ारों में भारी बिक्री हुई। डो जोन्स इन्डस्ट्रियल एवरेज (डीजेआइए) ने 1 मार्च 2009 को 6,547.05 (क्लोजिंग आधार पर) का नया 12 वर्षीय निम्न स्तर रजिस्टर किया है और केवल 6 सप्ताह में अपनी 20 प्रतिशत वेल्यू गंवा दी। वीआईएक्स इंडैक्स, बाज़ार जोखिम को मापने के लिए व्यापक रूप से प्रयुक्त किया जानेवाला एक उपाय, जिसे प्रायः 'निवेशक डर मापकांक' भी कहा जाता है 20 नवम्बर 2008 को 80.86 के रिकॉर्ड स्तर तक पहुँच गया। सुरक्षित जगहों की माँग के कारण खज़ाना प्रतिभूतियों से होने वाली आय भी गिर गई और 30 दिसम्बर 2008 को दस वर्षीय अमरीकी खज़ाना आय 2.05 प्रतिशत के निम्न स्तर तक पहुँच गई। त्रैमासिक खज़ाना बिल आय चार आधार बिन्दुओं (-) पर आ गई जो कि 1954 से अब तक की सबसे कम है और जिससे कि लोगों की सुरक्षा दिशा में जाने की माँग परिलक्षित हुई। सीडीएस फैलाव भी काफी बढ़े। प्रमुख सीडीएस सूचकांक[5] अर्थात् सीडीएक्स क्रॉस-ओवर, सीडी एक्स निवेश ग्रेड, आई ट्रैक्स यूरोप क्रॉसओवर तथा

चार्ट 5 : अमरीकी अल्पावधि दरों में गतिशीलता

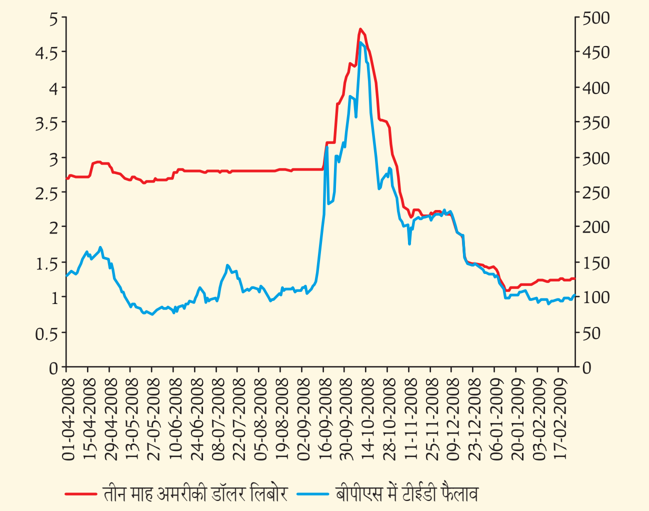

स्रोत : ब्लूमबर्ग

आई ट्रैक्स यूरोप भी क्रमशः 699 बीपीएस 242 बीपीएस 1150 बीपीएस, तथा 206 बीपीएस, तक पहुँच गए (मार्च 2009 में)। इसी के समानांतर घटनाक्रम में, जहाँ अन्य आस्ति श्रेणियों की वैल्यू घटी, वहीं इस अवधि में, जिन्सों की कीमतें भी बढ़ी। जीन्सों के वित्तीयकरण ने संभवतः स्फीतिकारी दबाव को और भी बढ़ाया। इस अवधि में सोने और कच्चे तेल की कीमतों में उछाल आया।

चार्ट 6 और 7 : क्रेडिट वृद्धि की प्रवृतियाँ

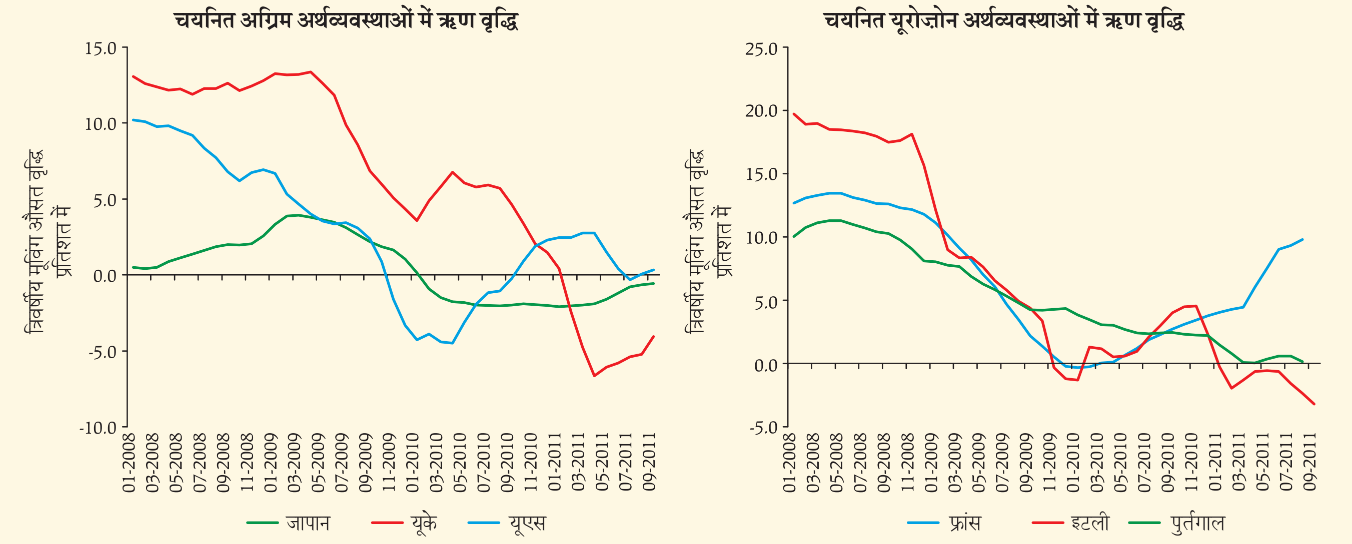

[4] यह काउंटर पार्टी ऋण जोखिम प्रीमियम को परिलक्षित करता है और द्रव्य बाज़ारों में व्यथा के बैरोमीटर के रूप में देखा जाता है।

[5] सीडीएक्स सूचकांक में उत्तरी अमरीकी तथा उभरती बाज़ार कंपनियाँ आती हैं तथा आई ट्रॅक्स सूचकांकों में शेष विश्व की कंपनियाँ आती हैं। सीडीएक्स क्रॉस ओवर- 35 उत्तरी अमरीकी कंपनियाँ, जो निवेश ग्रेड और जंक के बीच क्रॉस ओवर बिंदुओं पर हैं। सीडीएक्स निवेश ग्रेड - निवेश ग्रेड की 125 नार्थ अमरीकी कंपनियाँ, आई ट्रॅक्स यूरो क्रॉस ओवर - उप निवेश ग्रेड की 50 कंपनियाँ, आई ट्रैक्स यूरो निवेश ग्रेड की 125 कंपनियाँ।

चार्ट 8 : एनपीएल की प्रवृत्तियाँ

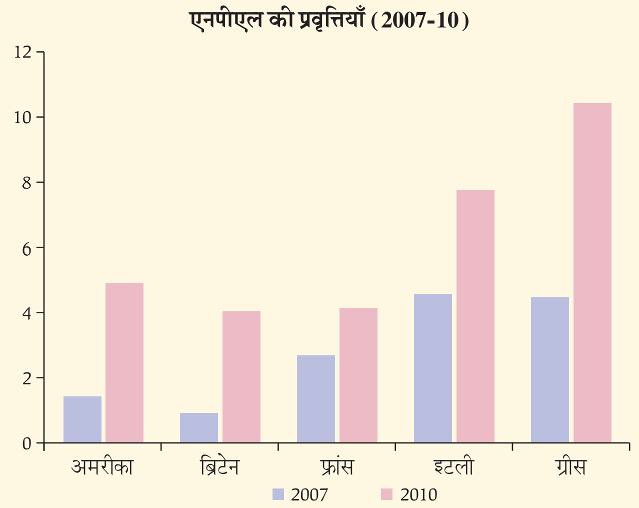

स्रोत : फाइनेन्शियल साउंडनेस इंडिकेटर्ज, आईएमएफ

19. वैश्विक संकट ने वैश्विक बैंकिंग क्षेत्र की वृद्धि और स्वास्थ्य पर भी काफी बुरा असर डाला है। अमरीका, ब्रिटेन, तथा यूरो ज़ोन की प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में, बैंक क्रेडिट में वृद्धि में समूचे 2009 में निरंतर गिरावट आई। गैर-निष्पादक- आस्तियों (एनपीए) (कुल ऋणों के प्रतिशत के रूप में) का स्तर ऊंचा हो जाने के कारण, आस्तियों की गुणवत्ता पर भी बहुत बुरा असर पड़ा है। ब्रिटेन और अमरीका में एनपीए, 2007 के 0.9 प्रतिशत तथा 1.4 प्रतिशत से बढ़कर, 2009 में क्रमशः 4.0 प्रतिशत तथा 4.9 प्रतिशत हो गए। तथापि, बैंकों की पूँजी स्थिति, आरामदायक रही और संकट के बावजूद अधिकांश वैश्विक बैंकों ने अपनी पूँजी की स्थिति निरंतर बढ़ाए रखी। 2010 तक ब्रिटेन, अमरीका, जापान, तथा जर्मनी के बैंकों में, जोखिम भारित आस्तियों से पूँजी अनुपात (सीआरएआर) 15 प्रतिशत से भी ऊपर रहा।

बी. नीतिगत प्रतिक्रियाएँ : वैश्विक

20. आर्थिक गतिविधियों के ढहने, अधिकांश बैंकों और वित्तीय संस्थाओं को हुई बड़ी हानियों, तथा वित्तीय बाज़ारों में आई जबरदस्त उथलपुथल के प्रत्युत्तर स्वरूप, मौद्रिक तथा बजटीय, दोनों प्रकार के प्राधिकारियों ने, अभूतपूर्व नीतिगत प्रत्युत्तर दिए।आर्थिक स्थिति पर पड़े बुरे असर और प्रत्याशाओं के दुष्चक्र को देखते हुए यह नीतिगत प्रत्युत्तर, वैश्विक स्तर पर तालमेल वाला रहा। आर्थिक गतिविधियों के तेज़ी से गिरने के कारण, अग्रिम अर्थव्यवस्थाओं और उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं, दोनों में, मौद्रिक नीति को बहुत ज्यादा हद तक आसान बनाया गया है। प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में 2009 के शुरु आत में ही नीतिगत ब्याज दरें, घटा कर, लगभग शून्य के स्तर पर लाई गई और ये दरें तीन वर्ष बाद (2012 के शुरु तक) इन स्तरों पर बनी रहीं। बेरोज़गारी की बढ़ती दरों और बढ़ती ऋणात्मक उत्पादन खाइयों को देखते हुए अमेरिका के फैडरल रिज़र्व ने, संकेत दिए कि, नीतिगत दरें - फैडरल फंड्स दरें - 2014 के अंत तक शून्य पर ही बनी रहेंगी। फैडरल रिज़र्व के वर्तमान आकलन को देखें तो नीतिगत दर लगभग 6 वर्ष तक शून्य पर ही बनी रहेगी। लगभग शून्य नीतिगत दरों और ब्याज दरों पर, शून्य बंधन लागू करने से जनित सीमाओं को देखते हुए, अमरीकी फैडरल रिज़र्व तथा उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के अन्य प्रमुख केंद्रीय बैंकों ने, ऋण और वित्तीयन शर्तों को सरल बनाने और दीर्घावधि आय कम करने के अपने प्रयास में अभूतपूर्व मात्रात्मक ईज़िंग का भी सहारा लिया है अर्थात् भारी मात्रा में चलनिधि डालना।

21. बजटीय उपायों की बात करें तो सर्वप्रथम, प्रमुख उन्नत अर्थव्यवस्थाओं वाली सरकारों ने, असफल होती वित्तीय संस्थाओं को सीधे मदद दी। इसके पश्चात् वृद्धि ढह जाने तथा ब्याज दरों को कम करके, शून्य पर लाए जाने की स्थिति के कारण आई रुकावटों के दृष्टिगत, लगभग सभी क्षेत्राधिकारों की सरकारों ने गतिविधि में तेजी लाने के लिए प्रोत्साहन पैकेजों का सहारा लिया। इतने बजटीय और मौद्रिक प्रोत्साहनों के बावजूद आर्थिक गतिविधि धीमी ही बनी रही।

सी. संकट का भारत पर असर

22. मज़बूत बैंकिंग प्रणाली, भारतीय बैंकों द्वारा सब-प्राइम आस्तियों के लिए दिए गए नगण्य ऋणों, तथा अपेक्षाकृत भलीभांति कार्य कर रहे वित्तीय बाज़ारों के बावजूद, वैश्विक वित्तीय संकट ने भारत पर काफी असर डाला। यह प्रभाव मुख्यतः भारत के वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ बढ़ते वित्तीय एकीकरण, तथा व्यापार के कारण पड़ा। जीडीपी के प्रतिशत के रूप में भारत का दुतरफा व्यापार (व्यापारिक निर्यात और आयात) संकट वर्ष 2008-2009 में, 40.7 प्रतिशत था जबकि 1998-99 में यह 19.6 प्रतिशत था। जीडीपी से कुल बाह्य लेनदेनों (सकल चालू खाता प्रवाह+सकल पूंजी खाता प्रवाह) - जो कि व्यापार और वित्तीय एकीकरण दोनों का संकेतक है, का अनुपात 1998-99 के 44 प्रतिशत से बढ़कर 2008-09 में 112 प्रतिशत हो गया।

23. संकट के तत्काल प्रभाव का अनुभव, विशाल पूंजी बहिर्प्रभावों तथा वित्तीय संस्थागत निवेशकों द्वारा भारी बिक्री के कारण घरेलू

शेयर बाज़ार में आई गिरावट तथा डॉलर (अमरीकी) के मुकाबले रुपए में आई तेज़ गिरावट के रूप में हुआ। बीएसई सूचकांक (बंद होते आधार पर), जिसने 8 जनवरी 2008 को 20873 का शिखर छुआ था, वह 9 मार्च 2009 को गिरकर 8,160 पर आ गया। जहाँ पूंजी बाहर जाने के कारण "घरेलू विदेशी मुद्रा चलनिधि" में गिरावट आई वहीं विदेशी मुद्रा बाज़ार में, रिज़र्व बैंक के हस्तक्षेप से, रुपए की चलनिधि में कसावट आई। सितम्बर 2008 के द्वितीय अर्द्ध से अक्तूबर 2008 के अंत की अवधि के दौरान, 'अंतर बैंक मांग मुद्रा (रातभर)' की दरें मज़बूत हुई (10 अक्तूबर को 19.70 प्रतिशत की ऊँचाई)। तथापि रिज़र्व बैंक द्वारा चलनिधि बढ़ाने के लिए किए गए उपायों से, नवम्बर 2008 के पहले सप्ताह से, मांग मुद्रा दरें, वापस अपने सामान्य स्तरों पर आ गई।

24. वैश्विक मंदी ने भारत के निर्यातों पर प्रतिकूल असर डाला जिससे चालू खाता घाटा (सीएडी) और बढ़ गया। 2005-08 की अवधि में निर्यात 25 प्रतिशत की दर से बढ़े थे मगर संकट वर्ष (2008-09) में गिरकर 13.6 प्रतिशत हो गए और 2009-10 में इन्होंने 3.5 प्रतिशत की नकारात्मक वृद्धि दर्ज की। उत्पादन वृद्धि, जो गत पांच वर्षों में 9 प्रतिशत से ज़रा सी कम थी, और 2005-08 की तीन वर्षीय अवधि में 9.5 प्रतिशत थी, वह संकट वर्ष (2008-09) में गिरकर 6.8 प्रतिशत रह गई।

25. संकट से पूर्व के वर्षों में पूंजी का अंतर्प्रवाह सीएडी से अधिक था और रिज़र्व बैंक को, इन प्रवाहों को, अपने तुलन-पत्र में एब्ज़ॉर्ब करना पड़ता था। जब वैश्विक निवेशकों ने, संकट की अवधि में, अपने पोर्टफोलियोज़ को पुनर्संतुलित करने की कोशिश की तो, लेहमैन

चार्ट 9-12 : संकट का भारत पर प्रभाव

चार्ट 9 : जीडीपी में गतिशीलता

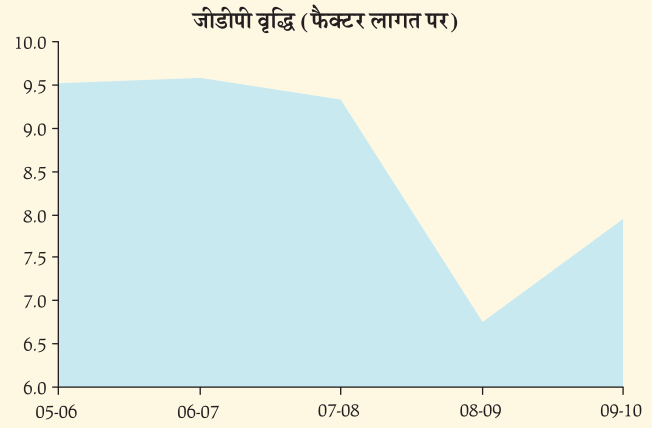

चार्ट 10: एफआईआई प्रवाहों में गतिशीलता

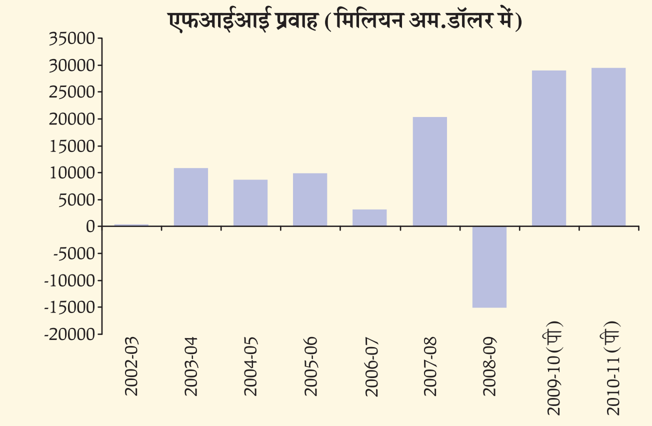

चार्ट 11 : बीएसई सूचकांक में गतिशीलता

चार्ट 12 : भारतीय रूपए में गतिशीलता

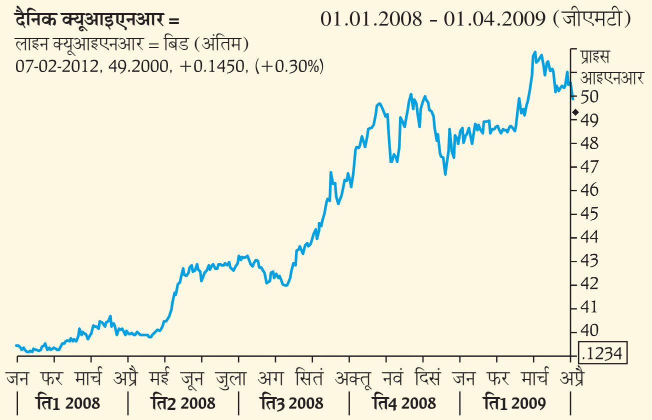

स्रोत : भारतीय रिज़र्व बैंक तथा रॉयटर्ज

ब्रदर्स के ढह जाने के तत्काल बाद, देश से बहुत सी पूंजी बाहर चली गई, जिससे रुपए पर दबाव बढ़ गया। विदेशी मुद्रा दर जनवरी 2008 की प्रति डॉलर ₹39.37 से गिर कर मार्च 2009 में ₹51.23 प्रति डॉलर पर आ गई।

26. कार्पोरेट्स की तरह क्रेडिट बाज़ार भी दबाव में आ गए और उन्हें निधीयन के बाहरी स्रोतों से संसाधन जुटाना कठिन हो गया जिससे वे निधीयन के लिए वापस घरेलू बैंकों और गैर-बैंकिंग संस्थाओं की ओर मुड़े और उन्होंने म्युचुअल फंड्स की चलनिधि योजनाओं से भी अपने पैसे बाहर निकाल लिए। इसके परिणामस्वरूप म्युचुअल फंडों पर प्रतिदान का दबाव पड़ा और इसी कड़ी में आगे गैर-बैंकिंग-वित्तीय-कंपनियों (एनबीएफसी) पर भी दबाव पड़ा जिनके लिए कि म्युचुअल फंड्स, निधीयन (फंडिंग) का एक महत्वपूर्ण स्रोत थे।

27. तथापि भारतीय बैंकिंग क्षेत्र ने, वैश्विक वित्तीय संकट के स्पिल ओवर प्रभाव को सह लिया है जैसा कि मज़बूत सीआरएआर तथा टीयर I सीआरएआर से स्पष्ट है जो कि 9 प्रतिशत के निर्धारित न्यूनतम विनियामक दर से ऊँचा रहा है। कुछ स्लिपेज के बावजूद आस्ति गुणवत्ता भी आरामदेह रही है। मार्च 2010 के अंत तक, सकल एनपीए अनुपात 2.50 प्रतिशत था (निवल एनपीए 1.13 प्रतिशत) था, जबकि सीआरएआर 13.58 प्रतिशत था। तथापि संकट का "स्पिल ओवर प्रभाव" बैंकिंग क्षेत्र की क्रेडिट वृद्धि में सबसे अधिक दृष्टिगोचर हुआ। सितम्बर 2008 से, अग्रिमों तथा परिसंपत्तियों की वृद्धि दर में, गिरावट की प्रवृत्ति दिखने लगी जो लगभग एक वर्ष अर्थात् सितम्बर 2009 तक जारी रही। अग्रिमों की साल-दर-साल वृद्धि में भी मार्च 2007 के अंत की, 28.5 प्रतिशत वृद्धि, सितम्बर 2009 के अंत में घटकर 12.3 प्रतिशत रह गई जबकि आस्तियों की वर्षवार वृद्धि इसी अवधि में, 22.9 प्रतिशत से गिरकर 15.1 प्रतिशत पर आ गई।

चार्ट 13 : भारतीय बैंकिंग प्रणाली के अग्रिमों और आस्तियों में वृद्धि (संकटपूर्व और पश्चात्)

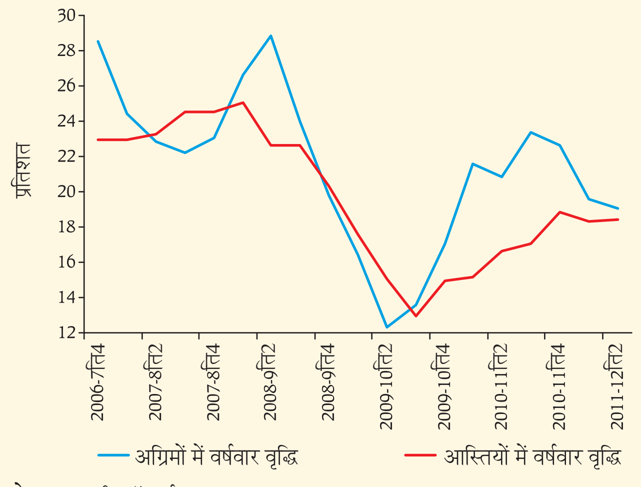

स्रोत : डाटा स्ट्रीम रॉयटर्स

डी. नीतिगत प्रतिक्रिया - भारत

28. वृद्धि में गिरावट होने तथा पूँजी प्रवाह रुक जाने को देखते हुए, भारतीय रिज़र्व बैंक और सरकार, दोनों ने भारत में संकट के असर को न्यूनतम रखने के लिए कई उपाय किए। तथापि भारतीय तथा कई उभरती अर्थव्यवस्थाओं के प्रत्युत्तर तथा विकसित अर्थव्यवस्थाओं की प्रतिक्रियाओं में काफी अंतर था। जहाँ विकसित अर्थव्यवस्थाओं को वित्तीय संकट और गहराती मंदी को बाहर लाने से ही संतुष्ट होना पड़ा वहीं भारतीय प्रतिक्रिया, मुख्यतः, आर्थिक वृद्धि में मॉडरेशन को रोकने की जरूरत से चालित थी । सरकारी प्रतिक्रिया का मुख्य तत्त्व बजटीय स्टीम्यूलस था, जबकि रिज़र्व बैंक की कार्रवाई, प्रति-चक्रिक विनियामक उपायों तथा साथ ही आसान चलनिधि तथा मौद्रिक स्थितियाँ सुनिश्चित करने संबंधी उपायों पर आधारित थी।

29. रिज़र्व बैंक के नीतिगत उपाय बाहर की छूत को रोकने की ओर लक्षित थे - घरेलू मुद्रा और ऋण बाज़ारों के सामान्य कार्यचालन की ओर लक्षित, और साथ ही यह भी सुनिश्चित करना कि चलनिधि का दबाव कहीं शोधक्षम प्रपातों को न शुरू कर दे। अन्य केंद्रीय बैंकों की भाँति परंपरागत तथा अपरंपरागत, दोनों प्रकार के उपाय किए गए। परंपरागत उपायों में पहला उपाय था - नीतिगत ब्याज दरों में तेज़ कटौती - प्रभावी नीतिगत दर सितम्बर 2008 की 9 प्रतिशत (रिपो रेट) से घटा कर अप्रैल 2009 में 3.25 प्रतिशत (रिवर्स रेपो रेट) कर दी गई। दूसरे उपाय के रूप में, बैंकिंग प्रणाली में नकदी बढ़ाने की दृष्टि से, नकद प्रारक्षित अनुपात (सीआरआर) सितंबर 2008 के 9 प्रतिशत से घटा कर, जनवरी 2009 में 5 प्रतिशत कर दिया गया। तीसरे, बाज़ार परिचालन (ओएमओ) के अंतर्गत सरकारी प्रतिभूतियों की खरीद के जरिए थोक में नकदी डाली गई तथा वापस खरीदी (बाय-बैक), प्रतिदानों (रिडैंपशन) तथा डीसिक्वेस्टरिंग के ज़रिये बाज़ार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस) के अन्तर्गत, शेष राशियों को खोला (अनवाइन्ड किया) गया। चौथे, निर्यात क्रेडिट के लिए पुनर्वित्त सुविधाओं को बढ़ाया गया। विदेशी मुद्रा चलनिधि को

बढ़ाने के लिए किए गए उपायों में एफसीएनआर (बी) के अंतर्गत अनिवासी भारतीयों की जमाराशियों तथा एनआरई जमाखातों पर ब्याज दरों की सीमा बढ़ाना तथा बाह्य वाणिज्यिक उधारों (ईसीबी) के मानदंडों में छूट देना शामिल है। अर्थव्यवस्था की धीमी गति तथा ऋण प्रवाह में गिरावट को देखते हुए 2006 में शुरु किए गए प्रति-चक्रिक विनियामक उपायों को भी उलट दिया गया।

30. भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा किए गए अपरंपरागत उपायों में ये शामिल थे : भारतीय बैंकों को अपनी विदेशी शाखाओं की अल्पावधि विदेशी निधीयन संबंधी आवश्यकताओं के प्रबंध में सुविधा दिलाने के लिए उनसे लिए रुपया - डॉलर अदला बदली सुविधा शुरू करना, बैंकों के लिए विशेष नकदी सुविधा ताकि वे म्यूचुअल फंडों तथा गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों को आगे ऋण प्रदान कर सके। एसपीवी के माध्यम से गैर-बैंकिंग-वित्तीय-कंपनियों को चलनिधि सहायता देने (यह एसपीवी इसी प्रयोजन के लिए बनाया गया। तथा छोटे उद्योगों, आवास, निर्यातों के लिए प्रदान किए गए ऋण के वित्त पोषण हेतु शीर्ष वित्तीय संस्थाओं के पास उपलब्ध ऋण देने योग्य संसाधनों को बढ़ाना। सितम्बर 2008 - जुलाई 2009 के दौरान रिज़र्व बैंक द्वारा किए गए उपायों से वास्तविक /संभावित चलनिधि में, ₹5,617 बिलियन की वृद्धि हुई।

31. दिसम्बर 2008 और जनवरी 2009 में किए गए बजट संबंधी प्रेरणात्मक उपायों में अतिरिक्त सरकारी खर्च तथा साथ ही करों में कटौती शामिल थी। यह प्रेरणात्मक पैकेज पहले ही घोषित किए जा चुके, निर्धन ग्रामीणों के लिए सुरक्षा-नैट में विस्तार, कृषि ऋण माफी का पैकेज तथा सरकारी कर्मचारियों के वेतन में वृद्धि के अतिरिक्त थे, जिन्होंने माँग को बढ़ाया।

32. इन सब बजटीय और मौद्रिक उपायों ने अपने उद्देश्यों को सफलतापूर्वक प्राप्त किया । वित्तीय बाज़ारों तथा बैंकिंग क्षेत्र ने सामान्य रूप से काम करना शुरू कर दिया। इन प्रेरणात्मक उपायों तथा साथ ही घरेलू माँग की अंतर्निहित मजबूती के प्रभाव से, रियल जीडीपी वृद्धि, जो कि 2008-09 में गिर कर 6.8 प्रतिशत पर आ गई थी वह 2009-10 में बढ़ कर 8.0 प्रतिशत हो गई और 2010-11 में 8.5 प्रतिशत हो गई। तथापि माग में मजबूत रिकवरी तथा निरंतर आपूर्ति दबावों की वजह से 2010-11 में स्फीतिकारी दबाव पैदा हो गए।

इ. भारत पर इसका असर कम क्यों हुआ ?

33. वित्तीय बाज़ारों तथा व्यापार पर तत्काल प्रभाव पड़ने के बावजूद संकट का भारतीय वित्तीय प्रणाली पर कोई खास प्रभाव नहीं पड़ा जिसके मुख्य कारण थेः (i)विनियमन के प्रति वृहद् विवेकाधीन दृष्टिकोण (ii) बहुसंकेतक आधारित मौद्रिक नीति (iii) अनुसंशोधित पूंजी खाता प्रबंधन (iv) प्रणालीगत अन्तर्जुड़ाव का प्रबंधन (v) ओटीसी लेनदेनों के लिए मज़बूत बाज़ार बुनियाद; तथा (vi) वित्तीय नवोन्मेष के प्रति परंपरावादी दृष्टिकोण।

34. भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा मौद्रिक नीति का निर्माण, बहु-उद्देश्यीय तथा बहु-लिखतों द्वारा निदेशित होता है, जो कि कई देशों द्वारा अपनाए जाने वाले एकल उद्देश्य तथा एकल लिखतों से उलट है। बहु-बृहत् आर्थिक संकेतकों की मॉनीटरिंग ने रिज़र्व बैंक को वित्तीय प्रणाली में हो रहे घटनाक्रम के अर्थ निष्पादन करने तथा त्वरित सुधार कार्य करने में मदद दी है। इसी प्रकार सीसीपी व्यवस्थाओं के ज़रिए ओटीसी लेन देनों में काउंटर पार्टी जोखिम को कम करने के लिए मजबूत प्रणालियाँ लागू करने तथा अंतर्जुड़ाव संबंधी मसलों के हल के लिए "शैडो-बैंकिंग-संस्थाओं-के-विनियमन" जैसे उपायों से, संकट के असर को सीमित करने में तथा भारी वैश्विक उथल पुथल के बावजूद अर्थव्यवस्था को पटरी पर बनाए रखने में मदद मिली है।

III. संकट का सरकारी (सोवरेन) कर्ज़ संकट में रूपांतरण

35. जैसे ही वैश्विक अर्थव्यवस्था वापस सामान्य होने लगी वैसे ही सरकारी (सोवरेन) कर्ज़ संकट के रूप में एक नया संकट उभर कर सामने आ गया। कई यूरोपीय प्रभुसत्ताओं के बढ़ते कर्ज ने विद्यमानता संबंधी चिंताएँ खड़ी कर दी, जिससे निवेशकों ने इन बाज़ारों से अपने पैसे निकाल लिए और परिणामस्वरूप उनके सीडीएस फैलावों में काफी बढ़ोतरी हो गई। 2009 के अंत में उभरे इस संकट ने 2011 के अंत तक समूचे यूरो ज़ोन को अपनी लपेट में ले लिया। अप्रैल 2010 में जहाँ केवल ग्रीक बॉंड्स का सीडीएस फैलाव 200 बीपीएस से अधिक था वहीं जनवरी 2012 आते-आते, जर्मनी, फिनलैंड, तथा नीदरलैंड्स को छोड़ कर, सभी देशों का सीडीएस फैलाव 200 बीपीएस से ऊपर पहुँच गया। वस्तुतः पीआईआईजीएस देशों (पुर्तगाल, इटली, आयरलैंड, ग्रीस तथा स्पेन) के बॉंडों का सीडीएस फैलाव तो 400 बीपीएस से भी ऊपर पहुँच गया।

36. धीमी गतिविधियों, बेल आउट्स तथा बजट संबंधी प्रोत्साहन उपायों के मिश्रण ने, प्रमुख विकसित अर्थव्यवस्थाओं के बजटीय घाटों तथा सरकारी कर्ज/जीडीपी अनुपातों को बहुत बढ़ा दिया और बजटीय स्वास्थ्य के संबंध में गंभीर चिंताएँ खड़ी कर दी। ये चिंताएँ यूरो क्षेत्र के देशों में सर्वाधिक दृश्य हैं जो कि कई समस्याओं के मिश्रणों से ग्रस्त थी। जैसे कि जरूरत से ज्यादा बड़ा बैंकिंग क्षेत्र, जिसे कि आवासन

चार्ट 14 : यूरो ज़ोन प्रभुसत्ताओं का सीडीएस फैलाव

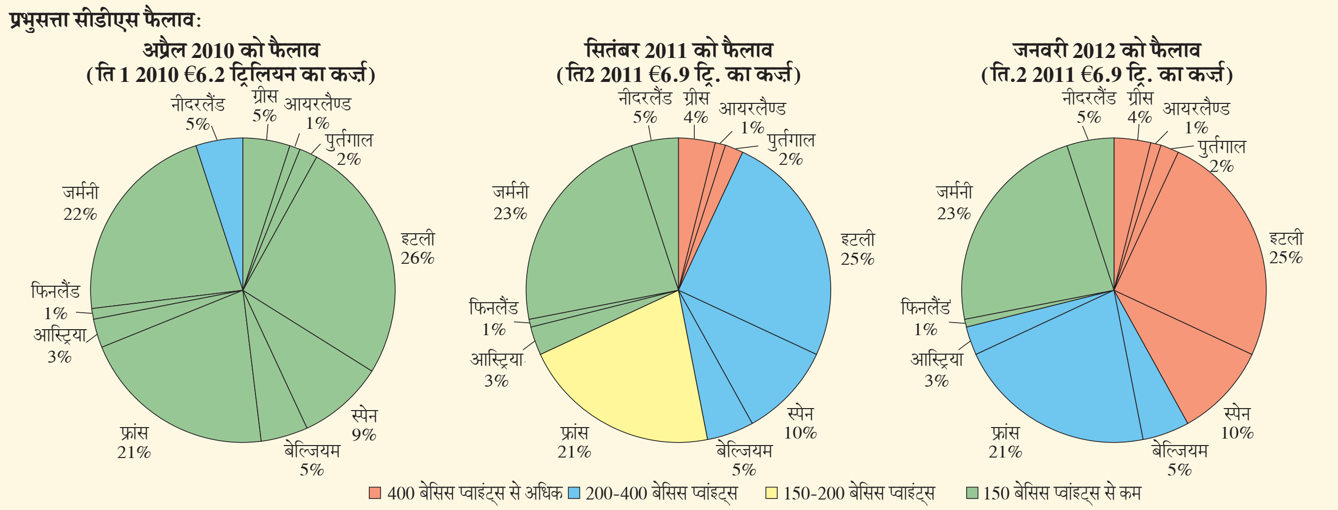

स्रोत : जीएफएसआर जनवरी 2012 तक - आइएमएफ

तेज़ी और मंदी का सामना करना पड़ा, एक अप्रतियोगी अर्थव्यवस्था जिसमें बार-बार 'चालू-खाते-घाटे' होते थे तथा एक स्फीत-राज्य-क्षेत्र जिसमें कि प्राइवेट सैक्टर में उच्च बेरोज़गारी थी[6], उदाहरणः उन्नत अर्थव्यवस्थाओं का बजटीय घाटा/जीडीपी अनुपात, 2007 की लगभग संतुलित स्थिति (0.6 प्रतिशत का घाटा) से बढ़कर 2009 में 9.0 प्रतिशत हो गया और इसी अवधि में अमरीका का प्रतिशत 2.7 प्रतिशत से 13.0 प्रतिशत हो गया। उभरती अर्थव्यवस्थाओं का बजटीय घाटा भी बढ़ा लेकिन अपेक्षाकृत कुछ कम और यह 2007 के 0.1 प्रतिशत के सरप्लस की तुलना में 2009 में 4.8 प्रतिशत के घाटे में आ गया। विकसित अर्थव्यवस्थाओं का सरकारी कर्ज़/जीडीपी अनुपात, 2007 के 73.4 प्रतिशत से बढ़कर 2009 में 93.7 प्रतिशत हो गया और 2011 में बढ़कर 103.5 प्रतिशत हो गया। इन्हीं वर्षों में उभरती अर्थव्यवस्थाओं का अनुपात 35.9 प्रतिशत, 36.7 प्रतिशत तथा 37.8 प्रतिशत पर लगभग अपरिवर्तित रहा।

37. सरकारी (सोवरेन) कर्ज के संकट ने एक तरह से चक्र पूरा कर लिया है। 2007 के वैश्विक संकट के दौरान, प्रभाव, बैंकिंग प्रणाली से प्रभुसत्ताओं की ओर फैला जबकि वर्तमान संकट में यह प्रभाव उलटी दिशा में अर्थात् प्रभुसत्ताओं से बैंकों की ओर है। वर्तमान संकट ज्यादा तकलीफ देने वाला इसलिए है कि वैश्विक संकट में जब बैंक दबाव में थे तो प्रभुसत्ताओं के रूप में पीछे एक सहारा था लेकिन अब स्वयं प्रभुसत्ताएँ ही चूक की स्थिति में है, तो प्रत्येक को यह आश्चर्य हो रहा है कि प्रभुसत्ता चूक के पीछे कौन सहारा बन कर खड़ा होगा।

वैश्विक अर्थव्यवस्था पर सरकारी (सोवरेन) कर्ज़ संकट का प्रभाव

38. वर्तमान संकट ने विनियामकों, नीति निर्माताओं तथा प्रभुसत्ताओं द्वारा वैश्विक संकट के पश्चात् किए गए बहाली के उपायों को भी ध्वस्त कटके रख दिया। हालांकि संकट का स्रोत और इसका तात्कालिक प्रभाव यूरो ज़ोन में ही अवस्थित है मगर इस संकट का निरसन प्रभाव समूचे विश्व में महसूस किया गया। वित्तीय स्थितियाँ खराब हो गई हैं। वृद्धि की संभावनाएँ मंद पड़ गई है और जोखिम बहुत बढ़ गए हैं। आईएमएफ के "विश्व-आर्थिक-आउटलुक" ने वैश्विक उत्पादन वृद्धि को नीचे लाकर 3.25 प्रतिशत कर दिया है क्योंकि प्रभुसत्ता आय में वृद्धि बैंक लीवरेजिंग के प्रभावों तथा अतिरिक्त बजटीय समेकन के प्रभाव के परिणामस्वरूप यूरो क्षेत्र अर्थव्यवस्था के 2012 में थोड़ी मंदी में जाने की संभावना है। खराब होते बाह्य वातावरण तथा कमज़ोर होती आंतरिक माँग के कारण उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की वृद्धि कम होने की संभावना है।

39. उच्च जोखिम बचाव तथा यूरो क्षेत्र के संकट से प्रेरित हुई डीलिवरेजिंग ने, पूरे विश्व के वित्तीय बाज़ारों पर असर डाला। दिसम्बर 2011 के दौरान यूरोपीयन यूनियन द्वारा की गई महत्वपूर्ण नीतिगत कार्रवाईयों की घोषणा के बावजूद वित्तीय बाज़ार दबाव में बन रहे जिसका कारण था एसएंडपी द्वारा यूरोपीयन वित्तीय स्थिरता निधि (ईएफएसएफ) तथा 9 यूरोक्षेत्र देशों की रेटिंग गिराना, जिसमें

[6] कॉगन, फिलिप (2012), *'पेपर प्रॉमिसिज - मनी, डेट एण्ड द न्यूवर्ल्ड ऑर्डर,* पेंग्विन।

से चार को तो दो क्रम (नॉच) नीचे गिरा दिया गया था। हाल की अवधि में यूरो क्षेत्र के सीडीएस फैलावों तथा सरकारी (सोवरेन) कर्ज़ों से होनेवाली आय में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है। अंतर्बैंक लीबोर मार्केट अपनी घटती मात्रा, ऋण वितरण की बढ़ती दरों, तथा घटते टैनॉर के कारण बढ़ा दबाव महसूस कर रही है। अमरीकी डॉलर, लंदन अंतर्बैंक प्रस्तावित दर-ओ आई एस फैलाव तथा यूरीबोर - ओ आई एस फैलाव काफी बढ़े हैं जिसका आशय है कि काउंटर पार्टी ऋण जोखिम प्रीमियम बढ़ा है। समूचे विश्व में इक्विटी बाज़ार तेज़ी से गिरे हैं, और उतार चढ़ाव बढ़े हैं।

40. बैंकिंग प्रणाली के संबंध में स्पेन, पुर्तगाल तथा इटली जैसे देशों में जो सरकारी (सोवरेन) कर्ज़ संकट से सीधे प्रभावित हुए है वहाँ 2011 में, बैंक ऋण में काफी गिरावट आई। इस संकट से परिवृत्तीय रूप से प्रभावित देशों जैसे कि फ्रांस और जर्मनी में, क्रेडिट वृद्धि, जो कि 2010 में बहाल होने के संकेत दे रही थी उसमें फिर से गिरावट आई है, जो कि सरकारी (सोवरेन) कर्ज़ संकट के और गहरे होने के संकेत देती है। आस्ति गुणवत्ता, जो कि एनपीएल अनुपातों के रूप में परिलक्षित होती है, भी यूरोज़ोन देशों में निरंतर गिरती रही।

41. ऋण जोखिमों को बढ़ाने के अलावा सरकारी (सोवरेन) कर्ज़ संकट ने यूरोज़ोन बैंकों के लिए निधीयन जोखिमों को भी बढ़ा दिया। अंतर्राष्ट्रीय निपटान बैंक द्वारा किए गए विश्लेषण के अनुसार, ग्रीस, आयरलैंड तथा पुर्तगाल के बैंक, थोक कर्ज़ और जमाराशियाँ जुटाने में, भारी कठिनाई का अनुभव कर रहे हैं और केंद्रीय बैंक की चलनिधि पर ही निर्भर हो गए हैं[7]। थोक निधीयन की लागत में वृद्धि ने अन्य यूरोपीय देशों के बैंकों को भी अंशतः प्रभावित किया है।

42. अंतर्राष्ट्रीय निपटान बैंक के अनुसार वित्तीय प्रणाली में सरकारी कर्ज़ की परिव्यापी भूमिका को देखते हुए ऐसी चार सरणियाँ है जिनके माध्यम से सरकारी (सोवरेन) कर्ज़ बैंकों की निधीयन लागत पर असर डालता है।

i. पहली, सरकारी कर्ज़ से जुड़ी हानियाँ बैंकों के तुलनपत्रों को कमज़ोर करती हैं जिससे निधीयन अधिक महँगा तथा प्राप्त करना कठिन हो जाता है।

ii. दूसरे, उच्च प्रभुसत्ता जोखिम उस संपार्श्विक की वैल्यू को घटा देता है जिसे बैंक थोक निधीयन तथा केंद्रीय बैंक चलनिधि पाने के लिए प्रयोग में ला सकते हैं।

iii. तीसरे, प्रभुसत्ता की रेटिंग गिरने से घरेलू बैंकों की रेटिंग भी कम हो जाती है, क्योंकि अन्य सैक्टरों के मुकाबले बैंक, प्रभुसत्ता की गिरावट से, अधिक प्रभावित हो सकते हैं। जैसे ही बैंकों की क्रेडिट रेटिंग गिरती है उनके थोक निधीयन की लागतें बढ़ती हैं।

iv. चौथे, प्रभुसत्ता कमज़ोर होने से निधीयन के लाभ कम हो जाते हैं जो कि बैंक अन्तर्निहित और बाह्यनिहित सरकारी गारंटियों से प्राप्त कर सकते थे।

[7] अंतर्राष्ट्रीय निपटान बैंक, (2011) *'द इंपैक्ट ऑफ सॉवरिन क्रेडिट रिस्क ऑन बैंक फंडिंग कंडीशन्ज़'*, जुलाई।

सरकारी (सोवरेन) कर्ज़ संकट का भारत पर असर

43. जैसे-जैसे यूरो क्षेत्र मंदी की ओर बढ़ता प्रतीत हो रहा है और थोड़ी-सी बहाली के बाद वैश्विक वृद्धि में फिर से मंदी आ रही है वैसे-वैसे भारत की वृद्धि भी, जितना पहले अनुमान लगाया गया था उससे कहीं अधिक गति से धीमी हो रही है। वैश्विक अनिश्चितता बढ़ने, औद्योगिक वृद्धि कमज़ोर होने, निवेश धीमा पड़ने, तथा वाणिज्यिक क्षेत्र में संसाधन प्रवाह में कमी आने से उत्पादन वृद्धि में गिरावट आ रही है। घरेलू ऊर्जा कीमतों में दबाव रुपए की गिरावट के पार होने में अपूर्णता तथा बजटीय घाटे की स्लिपेज के कारण पैदा हुए स्फीतिकारी जोखिमों और साथ ही खाद्य तथा जिन्सों की स्फीति से नीति में कड़ाई लाने के लिए मजबूर होना पड़ा। इन सब कारणों से 2011-12 के लिए भारत के वृद्धि अनुमानों को 7.6 प्रतिशत से घटा कर 6.0 प्रतिशत कर दिया गया है।

44. तथापि भारतीय बैंकिंग प्रणाली वर्तमान संकट से प्रभावित नहीं हुई क्योंकि जो देश वर्तमान संकट से प्रभावित हुए है उनमें भारतीय बैंकों की उपस्थिति नहीं है और ना ही भारतीय बैंकों के पास उनके द्वारा जारी बाँड अधिक मात्रा में हैं। फिर भी, हालांकि सरकारी (सोवरेन) कर्ज़ संकट का कोई पहले दर्ज़े का प्रभाव तो नहीं हुआ है मगर व्यापार और अन्य विभिन्न सरणियों के माध्यम से दूसरे दर्ज़े का प्रभाव हो सकता है। यदि यूरोपियन बैंक लीवर हटा दें तो विदेशों में कार्यरत भारतीय बैंकों की शाखाओं के लिए निधीयन संबंधी रु कावटे 'पैदा हो सकती है' और बैंकों तथा कार्पोरेट्स के उधार लेने की लागतें बढ़ सकती हैं जिससे कि विदेशी मुद्रा देयताओं के वित्त पोषण पर असर पड़ सकता है। विदेशों की माँग घटने और उसके कारण निवेश गतिविधि कम हो जाने के कारण 2011-12 में भारतीय बैंकिंग क्षेत्र की क्रेडिट तथा परिसंपत्ति वृद्धि में गिरावट आई है।

45. संकट ने भारतीय वित्तीय बाज़ारों पर भी काफी असर डाला क्यों कि खराब होते बृहत् आर्थिक पर्यावरण और भारतीय कार्पोरेट्स की अर्जन क्षमता में मंदड़ियों के प्रभाव की पृष्ठभूमि में विदेशी संस्थागत निवेशकों (एफआइआइ) द्वारा व्यापक निवल बिक्रियों के कारण शेयरों में तेज़ गिरावट आई। इसके अतिरिक्त पूंजी प्रवाह धीमा होने तथा व्यापार घाटा बढ़ने से भारतीय रुपए-

अमरीकी डॉलर की एक्सचेंज दर में भी भारी गिरावट आई और यह 15 दिसम्बर 2011 को, अब तक के सबसे निचले स्तर 54.30, पर पहुंच गया।

46. विदेशी मुद्रा बाज़ार में अत्यधिक उतार-चढ़ाव को रोकने के लिए रिज़र्व बैंक ने बहुत से उपाय किए हैं। सट्टेबाजी को रोकने के लिए किए गए विवेकाधीन उपायो में ये उपाय शामिल है : निरस्त अगाऊ लेन देनों की री-बुकिंग को अनुमत न करना (जिसकी मुद्राओं में रुपया भी शामिल है जिन्हें कि एक वर्ष के भीतर बकाया होने वाले पूँजी-खाते-लेन-देनों, तथा चालू-खाते-लेन-देनों की प्रतिरक्षा के लिए बुक किया जाता है चाहे उनका स्वरूप कुछ भी हो) प्राधिकृत डीलर बैंकों की "निवल रात भर आरंभिक राशि सीमाओं" में कमी, आयातकों द्वारा पिछले निष्पादन रूट के आधार पर बुक किए गए अगाऊ सौदों को निरस्त करने की सीमा में कमी, पिछले निष्पादन रूट के अंतर्गत बुक किए गए अगाऊ सौदों के निरस्तीकरण के बाद विनिमय लाभों को ग्राहकों को सौंपने पर प्रतिबंध लगाना, निरस्त किए गए अगाऊ सौदों को पुनः बुक करने की अनुमति विदेशी संस्थागत निवेशकों को न देना, सभी नकदी टॉम/स्पॉट लेन-देनों को, सुपुर्दगी/प्रेषण आधार पर निर्धारित करना अंतर्प्रवाहों को प्रोत्साहित करने के लिए ये उपाय किए गए : कर्ज़ प्रतिभूतियों में एफ आई आई निवेशों की सीमाएँ बढ़ाना, ईसीबी नीति का और अधिक उदारीकरण, एनआरई तथा एनआरओ जमाराशियों पर ब्याज दर की सीमाएँ शिथिल करना।

IV संकट से मिलने वाली शिक्षाएँ

47. हालाँकि यह घिसी पिटी उक्ति लगती है फिर भी मैं यह कहने से अपने आप को रोक नहीं पा रहा हूँ कि हर दुःख में कोई सुख छिपा होता है और हर संकट से कोई न कोई शिक्षा मिलती है। 2007 का वैश्विक संकट तथा वर्तमान सरकारी (सोवरेन) कर्ज़ संकट भी अपने साथ कई शिक्षाएँ लेकर आए हैं, और विश्लेषक, इनका दिन-प्रति-दिन विश्लेषण करने में व्यस्त हैं। हालाँकि विनियामक और नीति संबंधी कई शिक्षाएँ ली भी गई हैं और उनमें से कई कार्यान्वयन के विभिन्न चरणों में हैं, तथापि मैं उनमें से केवल उनका ही ज़िक्र करूँगा जो कि आपके लिए सर्वाधिक संगत हैं क्योंकि आप एक ऐसे व्यावसायिक विश्व में प्रवेश कर रहे हैं जो कि इस समय संकटों से जूझ रहा है।

शिक्षा 1 : किसी भी बात की अति बुरी होती है

48. आपने अपनी दादी को अक्सर यह कहते सुना ही होगा, और ध्यान रखिए यह उक्ति सदा ही सही होती है, और संकट के बाद आज तो यह और भी संगत है। अत्यधिक लीवरेज, अत्यधिक चलनिधि, अत्यधिक जटिलता तथा अत्यधिक लालच इन्होंने ही संकट को जन्म दिया। अब यह भी तर्क दिया जा रहा है कि बहुत अधिक वित्त भी वृद्धि के लिए ठीक नहीं रहता। हाल के अध्ययनों से[8] प्रकट हुआ है कि निचले स्तरों पर एक बृहत् वित्तीय प्रणाली में उच्च उत्पादकता होती है परंतु एक सीमा के बाद अधिक बैंकिंग तथा अधिक ऋण से वृद्धि कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त यह भी तर्क दिया जाता है कि तेज़

चार्ट 15-16 : भारतीय जीडीपी और रुपए पर प्रभाव

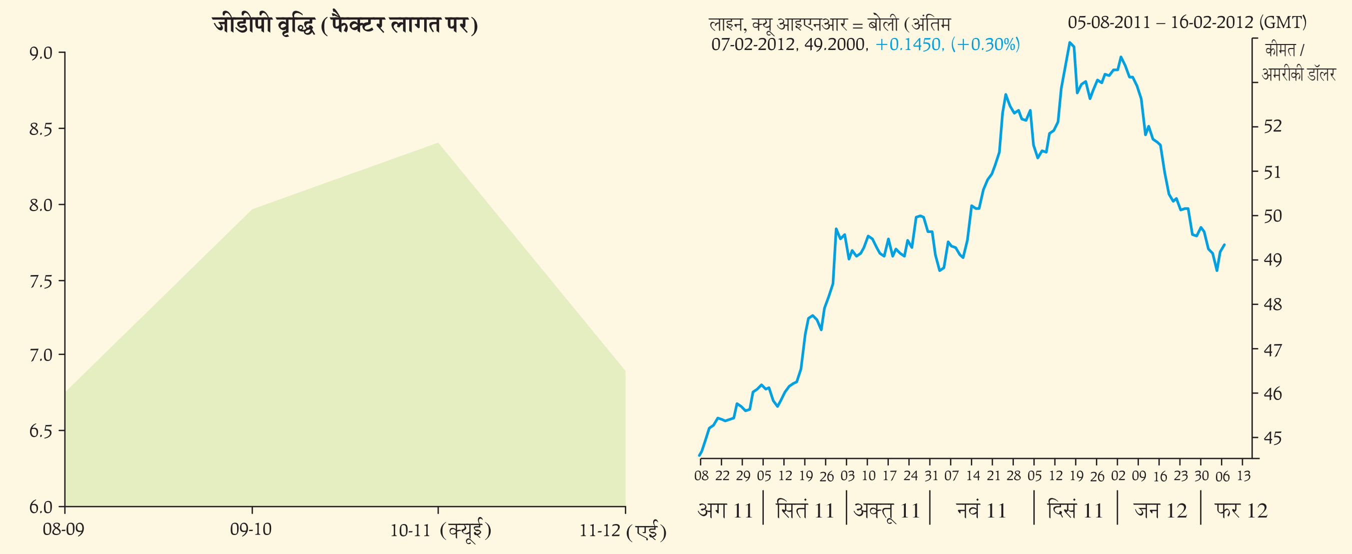

[8] सेचेती, स्टीफन तथा खारूबी एनेसे (2012), फरवरी में रिजर्व बैंक द्वारा आयोजित द्वितीय अंतर्राष्ट्रीय अनुसंधान कान्फ्रेंस में प्रस्तुत पेपर *'रिअसैसिंग दा इंपैक्ट ऑफ फायनैंस ऑन ग्रोथ'*।

वृद्धि वाला वित्तीय क्षेत्र कुल उत्पादकता वृद्धि के लिए अहितकारी हो सकता है। इसलिए संतुलित दृष्टिकोण सबसे अच्छा रहता है।

शिक्षा 2 : मॉडल परम नहीं है

49. संकट आने से पूर्व, इस बात पर अत्यधिक भरोसा किया जा रहा था, बल्कि एक अंधविश्वास किया जा रहा था कि मॉडल्ज़ पूर्णतः सच्चे होते हैं। समूची जोखिम प्रबन्धन प्रणालियाँ, इसी विश्वास के इर्द गिर्द बुनी गईं। संकट के उपरान्त, सहभागियों के सामने यह कड़वी सच्चाई आई कि ये मॉडल्ज़, जीवन की सत्यता को पूर्णतः परिलक्षित नहीं करते और मात्रात्मक मॉडलों पर अत्यधिक भरोसा करना ख़तरे से खाली नहीं होता। भौतिकशास्त्र जैसे पूर्ण विज्ञान, प्रकृति के नियमों द्वारा शासित होते हैं जो कि अपरिवर्तनीय होते हैं तथा निश्चित और भरोसे योग्य परिणाम देते हैं। जबकि वित्त, चंचल मानव व्यवहार तथा पक्षपातों द्वारा शासित होता है जिन्हें कि आसानी से आदर्श (मॉडल) नहीं बनाया जा सकता। इस तर्क के संबंध में कोई मॉडल न होने से, वे मॉडल ही अच्छे हैं, जिनमें कि चाहे कुछ सीमाएं भी हों। नसीम तालिब का कहना है कि कोई भी सूचना न होने की बजाय यदि आप भ्रामक सूचना पर यकीन करते हैं तो वह ज़्यादा बुरा है। यदि आप किसी पायलट को ऐसा आल्टीमीटर देते हैं जो कभी कभी खराब हो जाता है, तो वह जहाज को क्रैश कर देगा। इससे अच्छा है उसे कुछ मत दो ताकि वह खिड़की से देखकर ऊँचाई का अंदाज़ा तो लगा सके। मॉडल की कमियाँ ज्ञात होना उसके न्यायोचित उपयोग के लिए बहुत ही आवश्यक है।

शिक्षा 3 : वित्त को वास्तविक क्षेत्र की सेवा करनी चाहिए न कि उससे उलट

50. जहाँ इस बात पर सब सहमत हैं कि, वित्तीय प्रणाली, पूंजी और जोखिम के सक्षम आबंटन द्वारा आर्थिक विकास को आगे बढ़ाती है, वही वित्त का परम उद्देश्य है, जो कि आर्थिक विकास को आगे बढ़ाना है, उसे नहीं भूलना चाहिए। संकट से पूर्व की अवधि में वित्तीय गतिविधि इतनी अधिक बढ़ गई कि वित्तीय और संपदा क्षेत्रों की, बीच की नाल ही क्षतिग्रस्त हो गई और वित्त ने स्वयं अपने लिए ही जीना शुरू कर दिया। ऐसे परिदृश्य के खतरे इस संकट ने स्पष्ट कर दिए हैं।

51. इन विचारों के साथ मैं अपनी बात समाप्त करता हूँ । मुझे ध्यान से सुनने के लिए मैं आपका आभारी हूँ और आपके भावी जीवन के लिए मैं आपको शुभकामनाएँ देता हूँ।

संदर्भ :

आचार्य, शंकर (2009) *'भारत-वैश्विक संकट के बाद'* अकादमिक फाउंडेशन।

बैंक फॉर इंटरनेशनल सैटलमैंट्स (2011), *'द इंपैक्ट ऑन सॉवरिन क्रेडिट रिस्क ऑन बैंक फंडिंग कन्डीशन्ज़'* सीजीएफएस पेपर्स संख्या 43, जुलाई।

कमीशन ऑफ ग्रोथ एण्ड डिवेलपमैंट, (2008), *'द यू एस सब-प्राइम मॉर्टगेज क्राइसिज, इश्यूज़ रेज़्ड् एण्ड लैसंस लर्न्ट'*, वर्किंग पेपर संख्या 28।

अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, (2009), *'मेक्रो इकोनोमिक नीति के लिए वैश्विक संकट से सीखे गए पाठ'*, फरवरी।

-----, जनवरी 2012, *'वर्ल्ड इकोनोमिक आउटलुक अपडेट'*।

-----, जनवरी 2012, *'ग्लोबल फायनेंशियल स्टेबिलिटी रिपोर्ट अपडेट'*।

भारतीय रिज़र्व बैंक, मार्च 2010, *वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट*।

-----, दिसम्बर 2011, *वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट।*

शेंग, एंड्रयू, (2009), *'फ्रॉम एशियन टू ग्लोबल फायनेंशियल क्राइसिज'*, तृतीय के बी लाल स्मारक भाषण, फरवरी।